ISSN : 2277-7865
Price : ₹ 50

तित्थयर

कोबा (गांधीनगर)
पि. ३८२ ००९

वर्ष : ३९ अंक : ०२ मई २०१५

|| जैन भवन ||

With Best Compliments From :

THE JUTE SHOP®

www.thejuteshop.com

Promotional Bags

Fashion Bags

Ballyfabs International Limited

5, Middleton Street, Kolkata - 700 071
p: +91 33 2287 2286, f: + 91 33 2289 2519
e: info@thejuteshop.com, w: www.thejuteshop.com

GOTS | ECO CERT | SA 8000 CERTIFIED | ISO 9001 CERTIFIED | Sedex | FAIRTRADE | climatecare | ISO 14001:2004 | OHSAS 18001:2007 | Green America

BFIL0913

Manufacturers of Hessian & Jute Good

ISSN 2277 - 7865

तित्थयर

श्रमण संस्कृति मूलक मासिक पत्रिका

वर्ष - ३९ अंक - २ मई २०१५

लेख, पुस्तक समीक्षा तथा पत्रिका से सम्बन्धित पत्र व्यवहार के लिये
पता - Editor : Titthayar, P-25, Kalakar Street, Kolkata - 700 007
Phone : (033) 2268-2655, 2272-9028,
Email : jainbhawan@rediffmail.com
Website : www.jainbhawan.in

विज्ञापन तथा सदस्यता के लिये कृपया सम्पर्क करें --
Secretary, Jain Bhawan, P-25, Kalakar Street, Kolkata - 700 007
Life Membership : India : Rs. 5000.00. Yearly : 500.00
Foreign : $ 500

Published by Dr. Lata Bothra on behalf of Jain Bhawan from
P-25, Kalakar Street, Kolkata - 700 007, Phone : 2268-2655
and printed by her at Arunima Printing Works, 81, Simla Street
Kolkata - 700 006 Phone : 2241-1006

संपादन

डॉ. लता बोथरा
पी-एच.डी., डी.लिट्

॥ जैन भवन ॥

Editorial Board :

1. Dr. Satyaranjan Banerjee
2. Dr. Sagarmal Jain
3. Dr. Lata Bothra
4. Dr. Jitendra B. Shah
5. Dr. Anupam Jash
6. Dr. Peter Flugel
7. Dr. Rajiv Dugar
8. Smt. Jasmine Dudhoria
9. Smt. Pushpa Boyd

अनुक्रमणिका

क्र. सं. लेख	लेखक	पृ. सं.
१. यक्ष-यक्षी-प्रतिमाविज्ञान	डॉ. मारुति नंदन प्रसाद तिवारी	४१
२. स्वभाव-दर्शन का दर्पण-अहिंसा	श्रीमती कल्पना मुकीम	४८
३. ग्वालियर सम्भाग की जैन कला में ऋषभनाथ	अजीत प्रताप सिंह	५९
४. सोने के कंगन	श्री केवल मुनि	६६

ISSN 2277 - 7865

कवरपृष्ठ : जिन पार्श्वनाथ, खाम वाट, थाईलैण्ड

Composed by:

Jain Bhawan Computer Centre, P-25, Kalakar Street Kolkata - 700 007

यक्ष-यक्षी-प्रतिमाविज्ञान

डॉ. मारुति नंदन प्रसाद तिवारी

द्विभुजा अम्बिका की तीन मूर्तियां (10वीं-11वीं शती ई.) राज्य संग्रहालय, लखनऊ में हैं।[1] शीर्षभाग में आम्रवृक्ष एवं जिन आकृति से युक्त अम्बिका सभी उदाहरणों में ललितमुद्रा में विराजमान है। वाहन केवल दो ही उदाहरणों में उत्कीर्ण है।[2] इनमें यक्षी के करों में आम्रलुम्बि एवं पुत्र प्रदर्शित हैं।

(ख) जिन-संयुक्त मूर्तियां : इस क्षेत्र की जिन-संयुक्त मूर्तियों में अम्बिका सर्वदा द्विभुजा है। दसवीं शती ई. के पूर्व की नेमिनाथ की मूर्तियों में अम्बिका के साथ आम्रलुम्बि एवं सिंहवाहन का प्रदर्शन नहीं प्राप्त होता है। पर अम्बिका के साथ पुत्र का प्रदर्शन सातवीं-आठवीं शती ई. में ही प्रारम्भ हो गया था।[3] दसवीं शती ई. के पूर्व की मूर्तियों में आम्रलुम्बि के स्थान पर पुष्प (या अभयमुद्रा) प्रदर्शित है। राज्य संग्रहालय, लखनऊ; ग्यारसपुर, देवगढ़ एवं खजुराहो की दसवीं से बारहवीं शती ई. के मध्य की नेमिनाथ की मूर्तियों में द्विभुजी अम्बिका आम्रलुम्बि एवं पुत्र से युक्त है।[4] जिन-संयुक्त मूर्तियों में अम्बिका के साथ सिंहवाहन एवं दूसरा पुत्र सामान्यतः नहीं निरूपित हैं। शीर्षभाग में आम्रफल के गुच्छक भी कभी-कभी ही उत्कीर्ण किये गये हैं।

देवगढ़ के मन्दिर 13 और 14 की दो जिन संयुक्त मूर्तियों (11वीं शती ई.) में आम्रलुम्बि के स्थान पर अम्बिका के हाथ में आम्रफल प्रदर्शित है। कुछ उदाहरणों में दूसरा पुत्र भी उत्कीर्ण है।

---

1. क्रमांक जे 853, जे 79, 8.0.334
2. जे 853, 8.0.334
3. भारत कला भवन, वाराणसी 212
4. राज्य संग्रहालय, लखनऊ (जे 792) एवं देवगढ़ की कुछ नेमिनाथ की मूर्तियों में अम्बिका के स्थान पर सामान्य लक्षणों वाली यक्षी भी आमूर्तित है।

मन्दिर 12 की चहारदीवारी एवं मन्दिर 15 की मूर्तियों में सिंहवाहन भी बना है। तीन उदाहरणों (10वीं-11वीं शती ई.) में नेमि के साथ सामान्य लक्षणों वाली द्विभुजा यक्षी भी उत्कीर्ण है। यक्षी अभयमुद्रा (या वरदमुद्रा या पुष्प) एवं फल (या कलश) से युक्त है। चार मूर्तियों (11वीं-12वीं शती ई.) में यक्षी चतुर्भुजा है और उसके करों में वरद (या अभय) मुद्रा, पद्म, एवं फल (या कलश) प्रदर्शित हैं।

बिहार-उड़ीसा-बंगाल : इस क्षेत्र की स्वतन्त्र मूर्तियों में अम्बिका सदैव द्विभुजा है और आम्रलुम्बि एवं पुत्र से युक्त है। ल. दसवीं शती ई. की एक पालयुगीन मूर्ति राष्ट्रीय संग्रहालय, दिल्ली (63.940) में संगृहीत है। द्विभंग में पद्मासन पर खड़ी अम्बिका का सिंहवाहन आसन के नीचे उत्कीर्ण है। यक्षी के दाहिने हाथ में आम्रलुम्बि है और बायें से वह समीप ही खड़े (निर्वस्त्र) पुत्र की उंगली पकड़े है। पोट्टासिंगीदी (क्योंझर, उड़ीसा) की मूर्ति में सिंहवाहना अम्बिका ललित मुद्रा में विराजमान है और उसकी अवशिष्ट वामभुजा में पुत्र है।[1] अलुआरा से प्राप्त एक मूर्ति पटना संग्रहालय (10694) में है जिसमें दाहिने पार्श्व में एक पुत्र खड़ा है।[2] पक्बीरा (मानभून) की मूर्ति में अवशिष्ट बायें हाथ में पुत्र है।[3] अम्बिका नगर (बांकुड़ा) एवं वरकोला से भी सिंहवाहना अम्बिका की दो मूर्तियां मिली हैं।[4]

ललितमुद्रा में विराजमान सिंहवाहना अम्बिका की दो मूर्तियां नवमुनि एवं बारभुजी गुफाओं (11वीं-12वीं शती ई.) में उत्कीर्ण हैं।

---

1. जोशी, अर्जुन, 'फर्दर लाइट ऑन दि रिमेन्ट ऐट पोट्टासिंगीदी' उ.हि.रि.ज., खं. 10, अं. 4, पृ. 31-32
2. प्रसाद, एच.के. 'जैन ब्रोन्जेज इन दि पटना म्यूजियम,' म.जै.वि.गो.जु.वा., बम्बई, 1968, पृ. 289
3. मित्र, कालीपद, 'नोट्स ऑन टू जैन इमेमेज,' ज.वि.उ.रि.सो., खं. 28, भाग 2, पृ. 203
4. मित्रा, देवला, 'सम जैन एन्टिक्विटीज फ्राम बांकुड़ा, वेस्ट बंगाल,' ज.ए.सो.बं., खं. 24, अं. 2, पृ. 131-33

नवमुनि गुफा की मूर्ति में यक्षी के करों में आम्रलुम्बि एवं पुत्र हैं।[1] जटामुकुट एवं आम्रफल के गुच्छकों से शोभित अम्बिका के समीप ही दूसरा पुत्र (निर्वस्त्र) भी आमूर्तित है। बारभुजी गुफा के उदाहरण में यक्षी के दाहिने हाथ में फल और बायें में आम्रवृक्ष की टहनी हैं।[2] शीर्षभाग में आम्रवृक्ष और बायें पार्श्व में पुत्र उत्कीर्ण हैं।

दक्षिण भारत : दक्षिण भारत में भी अम्बिका का द्विभुज स्वरूप में निरुपण ही विशेष लोकप्रिय था। मूर्तियों में अम्बिका सामान्यतः पुत्रों एवं सिंहवाहन से युक्त है। दोनों पुत्रों को सामान्यतः वाम पार्श्व में आमूर्तित किया गया है। अम्बिका के हाथ में आम्रलुम्बि का प्रदर्शन नियमित नहीं था। दक्षिण भारत में शीर्षभाग में आम्रफल के गुच्छकों के स्थान पर आम्रवृक्ष के उत्कीर्णन की परम्परा लोकप्रिय थी। अम्बिका दक्षिण भारत की तीन सर्वाधिक लोकप्रिय यक्षियों (अम्बिका, पद्मावती, ज्वालामालिनी) में थी अम्बिका की प्राचीनतम मूर्ति अयहोल (कर्नाटक) के मेगुटी मन्दिर (634-35 ई.) से मिली है।[3] सामान्य पीठिका पर ललितमुद्रा में विराजमान द्विभुजा यक्षी के दोनों हाथ खण्डित हैं, पर शीर्षभाग में आम्रवृक्ष एवं पैरों के नीचे सिंहवाहन सुरक्षित हैं। वाम पार्श्व में अम्बिका का पुत्र उत्कीर्ण है जिसके एक हाथ में फल है। अम्बिका के पार्श्वों में पांच सेविकाएं बनी हैं। दाहिने पार्श्व की एक सेविका की गोद में एक बालक (निर्वस्त्र) है जो सम्भवतः अम्बिका का दूसरा पुत्र है।

आनन्दमंगलक गुफा (कांची) में सिंहवाहना अम्बिका की कई स्थानक मूर्तियां हैं। इनमें अम्बिका का बायां हाथ पुत्र के मस्तक पर

1. मित्रा, देबला, 'शासनदेवीज इन दि खण्डगिरि केब्स,' ज.ए.सो., खं. 1, अं. 2, पृ. 129
2. वही, पृष्ठ 132
3. कजिन्स, एच., दि चालुक्यन आर्किटेक्चर, आर्किआलाजिकल सर्वे आव इण्डिया, खं. 42, न्यू इम्पीरियल सिरीज, पृ. 31, फलक 4

स्थित है।[1] त्रावनकोर राज्य के किसी स्थल से प्राप्त एक मूर्ति (9वीं-10वीं शती ई.) में सिंहवाहना अम्बिका का दाहिना हाथ वरदमुद्रा में है और बायां नीचे लटक रहा है।[2] वाम पार्श्व में दोनों पुत्र बने हैं। कलुगुमलाई (तमिलनाडु) की एक मूर्ति (10वीं-11वीं शती ई.) में सिंहवाहना अम्बिका का दाहिना हाथ एक बालिका के मस्तक पर है[3] और बायां फल (या आम्रलुम्बि) लिये है। वाम पार्श्व में दो बालक आकृतियां उत्कीर्ण हैं।[4] एलोरा की जैन गुफाओं में अम्बिका की कई मूर्तियां (10वीं-11वीं शती ई.) हैं। इनमें आम्रवृक्ष के नीचे विराजमान अम्बिका के करों में आम्रलुम्बि और पुत्र (गोद में) प्रदर्शित हैं। यक्षी का दूसरा पुत्र सामान्यतः सिंहवाहन के समीप आमूर्तित है। अंगदि के जैन बस्ती (कर्नाटक) की मूर्ति में यक्षी के दाहिने हाथ में आम्रलुम्बि है और बायां पुत्र के मस्तक पर स्थित है। दक्षिण पार्श्व में सिंहवाहन और दूसरा पुत्र आमूर्तित हैं। मुर्तजानपुर (अकोला, महाराष्ट्र) की एक द्विभुज मूर्ति नागपुर संग्रहालय में है। इसमें सिंहवाहना अम्बिका आम्रलुम्बि एवं फल से युक्त है। प्रत्येक पार्श्व में उसका एक पुत्र खड़ा है। समान विवरणों वाली एक मूर्ति श्रवणबेलगोला के चामुण्डराय बस्ती से मिली है।[5]

दक्षिण भारत से अम्बिका की कुछ चतुर्भुज मूर्तियां भी मिली हैं। जिनकांची के भित्ति चित्रों में अम्बिका चतुर्भुजा है।[6] पद्मासन में विराजमान यक्षी के ऊपरी हाथों में अंकुश और पाश तथा शेष में अभय और वरदमुद्राएं प्रदर्शित हैं। बर्जेस ने कन्नड़ परम्परा पर आधारित

---

1. देसाई, पी. बीच, 'यक्षी इमेजेज इन साऊथ इण्डियन जैनिजम,' डा. मिराशी फेलिसिटेशन वाल्यूम, नागपुर, 1965, पृ. 345
2. देसाई, पी.बी., जैनिजम इन साऊथ इण्डिया ऐण्ड सम जैन एपिग्रापस, शोलापुर, 1963, पृ. 69
3. पुत्र के स्थान पर पुत्री का चित्रण अपारम्परिक है।
4. देसाई, पी.वी., पू.नि., पृ. 64
5. शाह, यू.पी., 'आइकानोग्राफी ऑव दि जैन गाडेस अम्बिका,' ज.यू.वां., खं. 9, भाग 2, पृ. 154-56
6. वही, पृ. 158

चतुर्भुजा कुष्माण्डिनी का एक चित्र भी प्रकाशित किया है जिसमें सिंहवाहना यक्षी के दोनों पुत्र गोद में स्थित हैं और उसके दो ऊपरी हाथों में खड्ग और चक्र प्रदर्शित हैं।[1]

विश्लेषण : अध्ययन से स्पष्ट है कि उत्तर भारत में दक्षिण भारत की अपेक्षा अम्बिका की अधिक मूर्तियां उत्कीर्ण हुई। जैन देवकुल की प्राचीनतम यक्षी होने के कारण ही शिल्प में सबसे पहले अम्बिका को मूर्त अभिव्यक्ति मिली। ल. छठी सातवीं ई. में अम्बिका की स्वतन्त्र एवं जिन-संयुक्त मूर्तियों का निरूपण प्रारम्भ हुआ।[2] सभी क्षेत्रों में अम्बिका का द्विभुज रूप ही विशेष लोकप्रिय था। जिन-संयुक्त मूर्तियों में तो अम्बिका सदैव द्विभुजा ही है।[3] उसके साथ सिंहवाहना एवं आम्रलुम्बि और पुत्र का चित्रण सभी क्षेत्रों में लोकप्रिय था। शीर्षभाग में आम्रफल के गुच्छक और पार्श्व में दूसरे पुत्र का अंकन भी नियमित था। श्वेतांबर स्थलों पर उपर्युक्त लक्षणों का प्रदर्शन दिगंबर स्थलों की अपेक्षा कुछ पहले ही प्रारम्भ हो गया था। श्वेतांबर स्थलों (अकोटा) पर इन विशेषताओं का प्रदर्शन छठी-सातवीं शती ई. में और दिगंबर स्थलों[4] पर नवीं-दसवीं शती ई. में प्रारम्भ हुआ। दिगंबर स्थलों की जिन संयुक्त मूर्तियों में सिंहवाहन एवं दूसरे पुत्र का प्रदर्शन दुर्लभ है। यह भी ज्ञातव्य है कि श्वेतांबर स्थलों पर नेमि के साथ सदैव अम्बिका ही निरुपित है, पर दिगंबर स्थलों पर कभी कभी सामान्य लक्षणों वाली अपारम्परिक यक्षी भी आमूर्तित है।

उल्लेखनीय है कि दिगंबर ग्रन्थों में द्विभुजा अम्बिका का ध्यान किया गया है।[5] पर दिगंबर स्थलों पर अम्बिका की द्विभुज और चतुर्भुज दोनों ही मूर्तियां उत्कीर्ण हुई। दिगंबर परम्परा की सर्वाधिक चतुर्भुजी

---

1. वर्जेस, जे., 'दिगंबर जैन आइकानोग्राफी,' इण्डि. एण्टि., खं. 32, पृ. 463, फलक 4, चित्र 22
2. प्रारम्भिकतम मूर्तियां अकोटा (गुजरात) से मिली हैं।
3. कुंमारिया एवं विमलवसही की कुछ नेमिनाथ मूर्तियों में अम्बिका चतुर्भुजा भी है।
4. देवगढ़, खजुराहो, ग्यारसपुर (मालादेवी मंदिर) एवं राज्य संग्रहालय, लखनऊ
5. केवल दिगंबर परम्परा के तांत्रिक ग्रन्थ में ही चतुर्भुजा एवं अष्टभुजा अम्बिका का ध्यान किया गया है।

मूर्तियां खजुराहो से मिली है। दूसरी ओर श्वेताम्बर परम्परा में अम्बिका का चतुर्भुज रूप में ध्यान किया गया है, पर श्वेताम्बर स्थलों पर उसकी द्विभुज मूर्तियां ही अधिक संख्या में उत्कीर्ण हुई। केवल कुम्भारिया, विमलवसही, जालोर एवं तारंगा से ही कुछ चतुर्भुजी मूर्तियाँ मिली हैं। श्वेताम्बर स्थलों पर परम्परा के अनुरूप अम्बिका के ऊपरी हाथों में पाश एवं अंकुश नहीं मिलते हैं।[1] पर दिगंबर स्थलों[2] की मूर्तियों में ऊपरी हाथों में पाश एवं अंकुश (या त्रिशूलयुक्त घंटा) प्रदर्शित हुए हैं। श्वेताम्बर स्थलों पर अम्बिका की स्थानक मूर्तियां दुर्लभ है[3], पर दिगंबर स्थलों से आसीन और स्थानक दोनों ही मूर्तियां मिली हैं।

श्वेताम्बर स्थलों पर जहाँ अम्बिका के निरूपण में एकरूपता प्राप्त होती है।[4], वही दिगंबर स्थलों पर विविधता देखा जा सकती है। दिगंबर स्थलों पर चतुर्भुजा अम्बिका के दो हाथों में आम्रलुम्बि एवं पुत्र और शेष दो हाथों में पद्म, पद्म-पुस्तक, पुस्तक, अंकुश, पाश, दर्पण एवं त्रिशूल-घण्टा में से कोई दो आयुध प्रदर्शित हैं। खजुराहो की एक अम्बिका मूर्ति (पुरातात्विक संग्रहालय, खजुराहो, 1608) में देवी के साथ यक्ष-यक्षी युगल का उत्कीर्णन अम्बिका-मूर्ति के विकास की पराकाष्ठा का सूचक है।

(23) पार्श्व (या धरण) यक्ष

शास्त्रीय परम्परा : पार्श्व (या धरण) जिन पार्श्वनाथ का यक्ष है। श्वेताम्बर परम्परा में यक्ष को पार्श्व[5] और दिगंबर परम्परा में धरण कहा गया है। दोनों परम्पराओं में सर्पफणों के छत्र से युक्त चतुर्भुज यक्ष का वाहन कूर्म है। श्वेतांबर परम्परा में पार्श्व को गजमुख बताया गया है।

1. विमलवसही एवं तारंगा की दो मूर्तियों में चतुर्भुजा अम्बिका के साथ पाश प्रदर्शित है।
2. खजुराहो, देवगढ़ एवं राज्य संग्रहालय, लखनऊ
3. एक स्थानक मूर्ति तारंगा के अजितनाथ मन्दिर पर है।
4. तारंगा, जालोर एवं विमलवसही की तीन चतुर्भुज मूर्तियों में अम्बिका के निरूपण में रूपगत भिन्नता प्राप्त होती है। अन्य उदाहरणों में अम्बिका के तीन हाथों में आम्रलुम्बि और चौथे में पुत्र हैं।
5. प्रवचनसारोद्धार में वामन नाम से उल्लेख है।

श्वेताम्बर परम्परा-निर्वाणकलिका में गजमुख पार्श्व यक्ष का वाहन कूर्म है। सर्पफणों के छत्र से युक्त पार्श्व के दक्षिण करों में मातुलिंग एवं उरग और वाम में नकुल एवं उरग वर्णित हैं।[1] अन्य ग्रन्थों में भी सामान्यतः इन्हीं लक्षणों के उल्लेख है।[2] केवल दो ग्रन्थों में दाहिने हाथ में उरग के स्थान पर गदा के प्रदर्शन का निर्देश हैं।[3]

दिगंबर परम्परा–प्रतिष्ठासारसंग्रह में कुर्म पर आरुढ़ धरण के आयुधों का अनुल्लेख है।[4] प्रतिष्ठासारोद्धार में सर्पफणों से शोभित धरण के दो ऊपरी हाथों में सर्प और निचले हाथों में नागपाश एवं वरदमुद्रा उल्लिखित हैं।[5] अपराजितपृच्छा में सर्परूप पार्श्व यक्ष को षड्भु बताया गया है और उसके करो में धनुष, बाण, भृण्डि, मुद्गर, फल एवं वरदमुद्रा के प्रदर्शन का निर्देश है।[6]

(क्रमशः)

1. पार्श्वयक्षं गजमुखमुरगफणामण्डितशिरसं श्यामवर्ण कूर्मवाहनं चतुर्भुजं बीजपूरकोरगयुतदक्षिणपाणि नकुलकाहियुत वामपाणि चेति। निर्वाणकलिका 18·23
2. त्रि.श.पु.च. 9·3·362-63; मन्त्राधिराजकल्प 3·47; देवतामूर्तिप्रकरण 3·62; पार्श्वनाथचरित्र (भावदेवसूरिप्रणीत) 7·827-28; रूपमण्डन 6·20
3. मातुलिंगगदायुक्तौ विभ्राणो दक्षिणौ करौ।
   वामौ नकुलसर्पाकौ कुर्पाकः कुन्जराननः।।
   मूर्ध्नि फणिफणच्छत्रो यक्षः पार्श्वोऽसितद्युतिः। पद्मानन्दमहाकाव्यः परिशिष्ट-पार्श्वनाथ 92-93
   द्रष्टव्य, आचारदिनकर 34, पृ. 175
4. पार्श्वस्य धरणो यक्षः श्यामांगः कूर्मवाहनः। प्रतिष्ठासारसंग्रह 5·67
5. ऊर्ध्वद्विहस्तधृतवासुकिरुद्भटाधः सव्यान्यपाणिफणिपाशवरप्रणंता।
   श्रीनागराजककुदं धरणोभ्रनीलः कूर्मश्रितो भजतु वासुकिमौलिरिज्याम्।।
   प्रतिष्ठासारोद्धार 3·151
   द्रष्टव्य, प्रतिष्ठातिलकम् 7.23, पृ. 338
6. पार्श्वो धनुर्वाण भृण्डि मुद्गरश्च फलं वरः।
   सर्परूपः श्यामवर्णः कर्तव्यः शान्तिमिच्छता।।अपराजितपृच्छा 221·55

स्वभाव-दर्शन का दर्पण-अहिंसा

श्रीमती कल्पना मुकीम

इन्द्रिय विषयों की लुब्धता का नतीजा हलाहल विष के समान होता है कहा है–

'आयात रम्ये परिणाम दुःखे सुखे कथं वैषयिके रतोऽपि' ।[1]

अर्थात् वैषयिक सुख परिणाम में दुःखकारक होते हैं। उपरोक्त विवेचन से वही निष्कर्ष फलित होता है कि सूज्ञजन को ज्ञान प्राप्तकर आचरण में उद्यत होना चाहिए तभी यह ज्ञान सार्थक हो सकता है।

आचार्य महाप्रज्ञजी इस संदर्भ में कहते है–

'पढमं नाणं तओ दया।'[2]

अर्थात् ज्ञान के बिना आचरण शक्य नहीं और आचरण के बिना ज्ञान की सार्थकता नहीं। आचार्य महाप्रज्ञ जी ने इसे जैन-दर्शन का समन्वयात्मक सिद्धान्त कहा है।

प्रमाद के 15 भेदांतर्गत 6 से 9 भेदों में चार विकथाओं का समावेश होता है। अतः विकथा किसे कहते है? संयम में बाधक, चारित्र विरुद्ध कथा को विकथा कहते हैं।[3]

विकथा के चार भेद है– स्त्रीकथा, भक्तकथा, देशकथा और राजकथा (ठाणांग चार सूत्र 282)

स्त्री कथा के चार भेद है–जातिकथा, कुलकथा, रूपकथा, वेषकथा।

1. स्त्री की जातिकथा– अमुख जाति के स्त्रियों की प्रशंसा अथवा निंदा करना।

---

1. सागारधर्मामृतम्, प्रणेता-महापण्डित आशाधर, संस्करण-प्रथम, सन् 1989-90, पृष्ठ - 67
2. जीव-अजीव, तेरहवाँ संस्करण, 2000, पृष्ठ - प्रस्तुति
3. श्री जैन सिद्धान्त बोल संग्रह प्रथम भाग, संग्रहकर्त्ता-श्री भैरोदान सेठिया, संस्करण-चतुर्थ, मार्च-2001, पृष्ठ-73

2. स्त्री की कुलकथा– अमुक कुल आदि के स्त्रियों प्रशंसनीय अथवा निंदनीय होने का कथा करना।

3. स्त्री की रूप कथा– 'कर्णाटी सुरतोपचारचतुरा लाटी विदग्धा प्रिया'

भोग विलास के समय उपचार करने में कर्णाटक देश की स्त्रियाँ चतुर होती है, लाट देश की स्त्रियाँ चतुर व प्यारी होती है। इस प्रकार भिन्न देशों की स्त्रियों के भिन्न-भिन्न अंगों की प्रशंसा अथवा निन्दा करना।

4. स्त्री की वेषकथा– अमुक देश की स्त्रियों का पहनावा मनोज्ञ होता है, तो अमुक का वेणीबंध मनोज्ञ अथवा अमनोज्ञ होता है इस प्रकार विशेषता या न्यूनता का वर्णन करना।

स्त्री कथा करने सुनने से उत्पन्न मोह लोक में निन्दा का कारण बनता, सूत्र व अर्थ ज्ञान की हानि होती है, ब्रह्मचर्य में दोष लगता है तथा अनाचार आदि से पतन की गर्त में भी गिरने की संभावना बनी रहती है। (निशीथ चूर्णि उद्देशक 1)

7. भक्तकथा[1]– इसके चार भेद है, यथा–आवाप कथा, निर्वाप कथा, आरंभ कथा, निष्ठान कथा।

1. भोजन की आवाप कथा–भोजन बनाने की कथा। अमुक पकवान बनाने में इतने प्रमाण रूप घी, चीनी आदि सामग्री लगने की चर्चा करना।

2. भोजन की निर्वाप कथा– पक्व, अपक्व अन्न के इतने भेद है, इससे व्यंजन अथवा पदार्थ इतने बनते है आदि कथा करना, निर्वाप कथा है।

3. भोजन की आरंभ कथा– अमुक भोज्य पदार्थों में वनस्पति, अग्नि, पानी आदि का इतना उपयोग होगा इत्यादि आरंभ की चर्चा करना आरंभ कथा है।

4. भोजन की निष्ठान कथा–भोज्य सामग्री में द्रव्य का प्रमाण कितना लगेगा आदि निष्ठान कथा है।

---

1. श्री जैन सिद्धान्त बोल संग्रह प्रथम भाग, संग्रहकर्ता–श्री भैरोदान सेठिया, पृष्ठ-74

भक्त कथा करने से गृद्धि होती है। गृद्धि आसक्ति भाव से षड्जीव निकाय के वध की अनुमोदना का दोष लगता है। भक्त कथा करने से रसनेन्द्रिय उत्तेजित होती है तथा विकृत रसपान में उद्यत होती है। विकृत रस चार प्रकार के कहे गये है,[1] यथा–1. **गोरस**-घृत, दुग्ध, दही, पनीर आदि, 2. **इक्षुरस**–चीनी, गुड़ आदि, 3. **फलरस**-अंगूर, अनार, आम आदि, 4. **धान्यरस**-मांड, तेल आदि। इन रसों को ग्रहण करने से रसना और मन में विकार पैदा होते है जिसे विकृति कहते है। यह शेष सभी इन्द्रिय विकारों की प्रोत्साहक होती है।

8. देशकथा[2]– इसके चार भेद है, यथा– 1. देशविधि कथा, 2. देश विकल्प कथा, 3. देश ध्वंदं कथा, 4. देश मेपथ्य कथा।

1. देशविधि कथा– देश विशेष के भूमि आदि की रचना, मणि, भोजन, भोजन के प्रारंभ में क्या दिया जाता है? भोग विलास की सामग्री आदि की कथा करना देश विधि कथा है।

2. देश विकल्प कथा– देश विशेष के कूप, मन्दिर, भवन, धान्यादि के उत्पादन आदि का वर्णन करना देश विकल्प कथा है।

3. देश छंद कथा– फलानी (अमुक) दिशा में ऐसी संस्कृति है, वहाँ अपनी कन्या का विवाह किया जा सकता है, उस दिशा में संबंध नहीं करना ही अच्छा है आदि देश-विशेष की गम्य-अगम्य विषयक कथा करना देश छंद कथा है।

4. देश मेपथ्य कथा– अमुक देश में स्त्री-पुरुषों के स्वाभाविक वेष और श्रृंगार आदि की श्रेष्ठ अथवा तुच्छ चर्चा देश मेपथ्य कथा है। (ठाणांग चार सूत्र 282)

देशकथा करने से किसी देश के प्रति राग तो किसी देश के प्रति द्वेष होता है जो कर्मबंध का कारण बनता है। अपने-पराये में वाद-विवाद खड़ा होने से कलह का कारण हो सकता है।

---

1. सागारधर्मामृतम्, प्रणेता-महापण्डित आशाधर, संस्करण,-प्रथम, सन्-1989-90, पृष्ठ 293
2. श्री जैन सिद्धान्त बोल संग्रह प्रथम भाग संग्रहकर्त्ता-श्री भैरोदान सेठिया पृष्ठ 75

9. राजकथा[1]– इसके चार भेद है, यथा–1. राजा की अतियान कथा, 2. राजा की निर्याण कथा, 3. राजा के बलवाहन की कथा, 4. राजा के कोष और कोठार की कथा।

1. राजा की अतियान कथा– राजा के राज्याभिषेक, विजय प्राप्त कर लौटने पर राज्यप्रवेश की, उस समय के गौरव (विभूति) आदि का वर्णन करना राजा की अतियान कथा है।

2. राजा की निर्याण कथा– नगर से राजा के निकलने की तथा उस समय के राज्य के ऐश्वर्य वैभव-विपुलता का वर्णन निर्याण कथा है।

3. राजा के बलवाहन की कथा– राजा की सेना अश्व, गज, रथादि वाहन व उसकी विशेषता वा गुण की, गणना की कथा बलवाहन कथा है।

4. राजा के कोष और कोठार की कथा– राजा के भण्डारों का, खजाने का, धान्यादि के कोठारों का, उन सभी के परिमाणों का कथन करना कोष और कोठार की कथा है।

कुल चार विकथाओं के सोलह भेद कषाय के पोषक होने से हिंसा वृद्धि में योगदान देने वाले हैं।

प्रमाद के 10-13 प्रकारांतर्गत चार कषायों का उल्लेख है। कषाय=कष+आय। जन्म, मरण, कर्म आदि अथवा कलुष भाव की वृद्धि अथवा जो संसार की आय अर्थात् वृद्धि करने वाला हो, वह कषाय है।[2]

कषाय के चार भेद है–क्रोध, मान, माया, लोभ।

डॉ. साध्वी सरोज श्री के अनुसार–मोह कर्म के उदय से प्रज्वलन रूप क्रोध है; अहंभाव मान है; दूसरे को ठगना माया और द्रव्य में मूर्च्छा लोभ है।[3] माया-लोभ, राग-रूप एवं क्रोध-मान द्वेष रूप है।

साध्वी डॉ. नीलांजनाश्री के अनुसार चार भेदों की परिभाषाएं इस प्रकार है–

क्रोध– जीव या अजीव पर गुस्सा करने को क्रोध कहते हैं।

---

1. श्री जैन सिद्धान्त बोल संग्रह प्रथम भाग, श्री भैरोदान सेठिया, पृष्ठ - 76
2. जैन तत्त्व प्रकाश, लेखक–पूज्य श्री अमोलक ऋषिजी म. सा., पृष्ठ 173
3. आगम पच्चीस बोल, डॉ. साध्वी सरोजश्री, वर्ष 2000 (1999) पृष्ठ-89

मान– घमंड या अहंसार करने को मान कहते हैं।

माया– कपट या प्रपंच करना माया हैं।

लोभ– लालच या तृष्णा रखने को लोभ कहते हैं।[1]

लेखिका साध्वी विचक्षणश्री 'प्रज्ञा' ने उत्तराध्ययन सूत्र के 23वें अध्ययन में क्रोध, मान, माया और लोभ को कषाय रूप अग्नियाँ जो सांसारिक जीवों को प्रतिपल जलाती रहती है,[2] ऐसा कहा है।

शास्त्रकार कहते हैं[3]–

कोहो पीइं पणासेई, मानो विनय नासणो।
माया मित्ताणि नासेइ, लोहो सव्व विणासणो।।

अर्थात् क्रोध प्रीति का नाश करता है, मान विनम्रता का नाश करता है, माया मित्रता का नाश करती है लोभ ऐसा दुर्गुण है, कि वह हमारे सारे के सारे सद्गुणों को नष्ट कर देता है।

10. क्रोध– क्रोध का निवास कपाल में होता है। '**कोहो पीइं पणासेई**' अर्थात् क्रोध प्रीति को नष्ट कर देता है। आखिरकार यह क्रोध उत्पन्न होता क्यों है? ठाणांग सूत्र में क्रोध उत्पत्ति के चार कारण होने का उल्लेख आचार्य महाश्रमण ने किया है– 'खेत्तं पडुच्च, वत्थु पडुच्च, शरीरं पडुच्च, उवहिं पडुच्च'[4] अर्थात् क्षेत्र यानि खुली जमीन, वस्तु, शरीर और उपकरण, इन चार निमित्तों से क्रोध उत्पन्न होता है। इनकी आसक्ति ही क्रोध के मूल में होती है।

क्रोध इस प्रकार उत्पन्न तो होता है लेकिन कब? विनोबा भावे का कथन यहाँ विचारने योग्य है, 'क्रोध आ गया' वास्तव में यह आता नहीं है, अगर अन्दर है तो निमित्त पाकर प्रगट होता है। जैसे–सरोवर में पत्थर फेंकने से गंदगी ऊपर आती है, क्योंकि पहले से वह अन्दर मौजूद थी। शहरों के तरणताल में पत्थर क्या चट्टान डालने पर भी गंदगी ऊपर नहीं आती क्यों? क्योंकि वह अन्दर होती ही नहीं है।[5]

1. नवतत्त्व प्रश्नोत्तरी, साध्वी डॉ. नीलांजनाश्री, आवृत्ति द्वितीय, सन् 2010, पृष्ठ 93-94
2. श्री उत्तराध्ययन से चुने दिव्य मोती, साध्वी विचक्षणाश्री प्रज्ञा प्रथम संस्करण, सन् 2007, पृष्ठ 107
3. श्री अमर भारती, मई 2009, वर्ष 45, अंकः 05, पृष्ठ - 7
4. युवादृष्टि, जून 2012, वर्ष 40, अंक - 6, पृष्ठ - 9
5. मोक्षमार्ग में बीस कदम, प्रवचनकार-श्री पद्मसागरसूरिश्वरजी म. सा. संस्करण तृतीय, वि. सं. 2049, (कोबा) प्रकाशक - श्री अरुणोदय फाउंन्डेशन, पृष्ठ-35

इन्द्रियाँ व उनकी शक्तियों के होते हुए भी क्रोध में मनुष्य अंधा, बहरा, गूंगा बनता है। मनुष्य विवेकहीन, क्रूर, कठोर, पाशविक, चाण्डाल, दानव आदि क्रोध के कारण होता है। क्रोध को विषधर सर्प, नरक का द्वार, दुःख का भण्डार, अनर्थों का घर आदि कहा गया है। क्या तब भी क्रोध करना चाहिए? हाँ! लेकिन किस पर?

एक कवि **'अपकारिषु कोपश्चेत कोपे कोपः कथं न ते?'** यदि तु अपकारी पुरुषों पर क्रोध करना चाहता है तो (सबसे बड़ा अपकारी स्वयं क्रोध ही है, इसलिए) अपने क्रोध पर ही क्रोध क्यों नहीं किया करता[1]

गुरु सज्जन शशि चरणरज साध्वी सम्यक् प्रभाश्री **'क्रोध एक दानव'** विषय पर प्रवचन में क्रोधी मनुष्य सर्वाधिक जहरीला प्राणी है, बताते हुए कहती है—स्थानांग सूत्र व भगवती सूत्र में कहा गया है कि बिच्छू में अर्ध भरत क्षेत्र प्रमाण, मेंढक में भरत क्षेत्र प्रमाण, सर्प में जम्बू द्वीप प्रमाण एवं मनुष्य में ढाई द्वीप क्षेत्र प्रमाण जहर है।[2]

'वाल्मीकी रामायण' में कहा गया है—**क्रोध प्राणहरः शत्रुः**[3] अर्थात् क्रोध प्राणघातक शत्रु है। डॉ. जे. एस्टर नामक वैज्ञानिक का कथन है कि पंद्रह मिनिट क्रोध में रहने से मनुष्य के शरीर की इतनी ऊर्जा नष्ट हो जाती है, जितनी में वह आसानी से साधारण अवस्था में नौ घण्टों तक कड़ी मेहनत कर सकता है।[4]

कतिपय चिन्तकों के क्रोध पर विचार प्रस्तुत है—

1. क्रोध का अर्थ है दूसरों की त्रुटियों का प्रतिशोध स्वयं से लेना।[5] —एलेक्जेन्डर पोप

2. क्रोध वह तेजाब है जो किसी भी चीज जिस पर वह डाला जाय, से ज्यादा उस पात्र को अधिक हानि पहुँचा सकता है, जिसमें वह रखा हो।[6] मार्क ट्वेन

---

1. वही-पृष्ठ-35
2. क्रोध एक दानव संकलनकर्ता-कोचर परिवार, प्रकाशन तिथि-भादवा सुदी 11 सं. 2067, पृष्ठ 86, कोलकाता-19, सितम्बर 2010
3. वही, पृष्ठ - 68
4. वही, पृष्ठ - 22
5. युवादृष्टि, जून-2012, वर्ष - 40, अंक - 6, पृष्ठ - 25
6. वही, पृष्ठ - 40

3. क्रोध सदैव मूर्खता से शुरू होता है और पश्चाताप पर समाप्त।[1] अरस्तु

11. मान–इसका निवास गर्दन है। शास्त्र कहते है **'माणो विणयनासणो'** मान से विनय नष्ट होता है, जो जिनशासन का मूल है। विनय का व्यूत्पत्तिपरक अर्थ करते हुए कहा गया है कि **'विलयं नयति कर्म-मलमिति विनयः'**[2] अर्थात् जो कर्ममल को दूर कर दे वह विनय है। इसी लिए विनय को मोक्ष का द्वार कहा गया है। यह विनय किससे प्राप्त होता है तथा इस विनय से क्या प्राप्त होता है? **'विद्या ददाति विनयम्, विनयाद् याति पात्रताम्।'**[3] अर्थात् विद्या से विनय और विनय से पात्रता (योग्यता) प्राप्त होती है। इस तरह जीव गुणग्राही बनता चला जाता है। कहा है–

'भवन्ति नम्रास्तरवः फलोद्‌गमैः।'[4] अर्थात् ज्यों ज्यों फल निकलते है, त्यों त्यों वृक्ष झुकते जाते हैं। इसी प्रकार ज्यों ज्यों ज्ञानादि सद्‌गुण प्राप्त होते है, त्यों त्यों सज्जन पुरुष नम्र होते जाते है। 'पढ़मं नाणं तओ दया।' ज्ञान होने से दया का पालन भली प्रकार से हो सकता है। संत तुलसी ने लिखा है–**दया धर्म का मूल है, पाप-मूल अभिमान**।[5] अर्थात् धर्म का मूल दया है, परन्तु अभिमान पाप का मूल है। यह मान उत्पन्न होता कैसे है? मान की उत्पत्ति आठ प्रकारों से होती है, यथा–जातिमद, लाभमद, कुलमद, ऐश्वर्यमद, बलमद, रूपमद, तपमद व श्रुतिमद।

मान जहाँ होता है वहाँ क्रोध अवश्य होता है। दोनों सहभावी एवं दोनों ही द्वेष के अंतर्गत होने से एक का होना, दूसरे का न होना संभव नहीं। इसकी दलदल में फंसा आदमी स्वयं से भी अनभिज्ञ हो जाएँ तो अचरज जैसा कुछ नहीं।

12. माया–माया का स्थान पेट है। शास्त्रों में माया को मिथ्यात्व एवं शल्य भी माना गया है। अतएव महा मोहनीय (जिसकी उत्कृष्ट स्थिति सत्तर कोड़ाकोड़ी सागरोपम की है) के कर्मबंध का कारण भी है। इतना ही नहीं वरन् माया से नीच से नीचतर पर्याय की आगामी भव में

1. वही, पृष्ठ - 25
2. जैन धर्म और दर्शन, संस्करण 1996 मुनि श्री प्रमाणसागरजी महाराज, ISBN : 81-7483-007-3, पृष्ठ-161
3. मोक्ष मार्ग में बीस कदम, प्रवचनकार श्री पद्मसागरसूरिश्वरजी म. सा. पृ.-32
4. वही पृष्ठ - 32
5. वही पृष्ठ - 112

प्राप्ती होती है। जैसे–माया करने से पुरुष-स्त्री, स्त्री-नपुंसक, नपुंसक-तिर्यंच बनता है। माया एक प्रकार की दगाबाजी है जो प्राणी की प्रकृति को वक्र बनाती है। यह दगाबाजी केवल अन्य के साथ ही नहीं, स्वयं के साथ भी की जा सकती है। आचारांग सूत्र में 'माया' की सर्वत्र **'स्ववीर्यनिगूहनम्'** व्याख्या की है।[1] अर्थात् अपनी शक्ति, ताकत, वीर्य को छिपाना यही माया है।

आत्म कल्याणार्थ, पुरुषार्थ की शक्ति होते हुए भी परे हटना अथवा परहित साध्यता में जितना किया जा सकता है, उससे भी कम अथवा ना करते हुए यह कहना कि जो कर सकते थे वह किया, उससे अधिक और नहीं कर सकते है। यानि दूसरे शब्दों में गलत नहीं करना लेकिन अपनी क्षमता का उपयोग कम अथवा नहीं करना, यही माया है। माया का यथार्थ रूप दूसरे शब्दों में यो प्रकट किया जा सकता है– **'मुँह में राम बगल में छूरी'**

13. लोभ–लोभ मनुष्य को रोम-रोम में है। **'लोहो सव्व विनासणो'** अर्थात् लोभ सब सद्गुणों का नाशक है। तथापि कहा ज़ाता है– **'लालच बुरी बला' 'जहाँ लाहो तहाँ लोहो'**[2] लोभी को यदि लाभ हो जाएँ तो उसके लोभ में वृद्धि का कोई पारावार नहीं। क्योंकि **'इच्छा हु आगास समा अणंतिया'**[3] अर्थात् इच्छाएँ आकाश के समान अनंत हैं। वो तो खत्म नहीं होती बल्कि उसकी अपाप्ति से व्याकुल मानव के सभी सद्गुणों का ह्रास अवश्य होता है।

स्वामी विवेकानंद कहते है–कामनाएँ समुद्र की भाँति अतृप्त है, पूर्ति का प्रयास करने पर उनका कोलाहल बढ़ जाता है।[4] ऐसी अनन्त कामनाओं का सैलाब, अपने पीछे मनुष्य को भगाता हुआ, उसकी जिंगदी तबाह कर देता है। क्योंकि उसका कोई अंत नहीं है। कहा है-**-'सुवण्ण रुपस्स उ पव्वया भवे, सिया हू केलास समा असंखया'** अर्थात् अगर आदमी के सामने सोने के कैलाश पर्वत भी खड़े कर दिये जाये, तो भी इच्छाओं के आसमान का कोई ओर-छोर नहीं है।[5] यही

1. जिनवाणी–दिसम्बर 2000, पृष्ठ -19
2. युवादृष्टि, मार्च 2012, वर्ष-40, अंक-3, पृष्ठ-22
3. जिनवाणी-अक्टूबर 1998, कार्तिक 2055 वर्ष 55, अंक-10, पृष्ठ - 36
4. युवादृष्टि, मई 2012, वर्ष 40, अंक-5, पृष्ठ - 30
5. युवादृष्टि, मई 2012, वर्ष 40, अंक-5, पृष्ठ - 22

कामना, इच्छा, लालसा, चाह, तृष्णा, आसक्ति, मूर्च्छा, अभिलाषा, पिपासा, अपेक्षा, आशा मानव को अपना दास बनाकर संसार में भटकाती है। इसकी उपेक्षा मानव को मुक्ति दिलाती है। कहा है–

'अपेक्षैव घनो बन्धः उपेक्षैव विपेक्तता।'[1]

(अपेक्षा ही सघन बंध है और उमुक्षा ही मुक्ति है।)

अपेक्षा की उपेक्षा करने वाले ही उच्च स्थान पाते है। कहा है-

आशाया ये दासा-स्ते दासाः सर्व लोकस्य।
आशा दासी शेषाम् तेषां दासायते लोकः।।[2]

अर्थात् जो आशा के दास हैं, वे सारे संसार के दास, परन्तु आशा जिनकी दासी है, वे संसार के स्वामी है। लोभ के घातक रूप को संक्षेप में इस प्रकार प्रकट किया जा सकता है–**'चमड़ी जाय-दमड़ी ना जाय।'**

इन्हीं चार कषायों के अनंतानुबंधी, अप्रत्याख्यानावरण, प्रत्याख्यानावरण व संज्वलन के भेद से चार गुणित चार - सोलह का उल्लेख साध्वी श्री विचक्षण श्री ने उत्तराध्ययन सूत्र के 33वें अध्ययन[3] में होने का उल्लेख किया है।

उत्तराध्ययन सूत्र के चौथे अध्ययन की 12वीं गाथा में चार कषायों का क्या करना चाहिए, इसका उल्लेख इस प्रकार है[4] क्रोध से स्वयं को बचाओ, अहंकार अर्थात् मान को स्वयं से हटाओ, माया का सेवन स्वयं मत करो, स्वयं ही लोभ का त्याग करो।

कषायों की यह श्रृंखला इस प्रकार व्यक्ति को पतन की गर्त में गिराती हुई, उसके भावों को मलीन करती हुई सदा उसे हिंसक बनाएँ रखने में उद्यत रहती है।

प्रमादी को हिंसक की संज्ञा दी गई अतएव प्रमाद के पंद्रह कारणों की श्रृंखला में पाँच इन्द्रियाँ, चार विकथा, चार कषायों को स्पष्ट करने के पश्चात् प्रणय और निद्रा का स्पष्टीकरण आवश्यक है।

14. प्रणय–श्रोतेन्द्रिय तथा चक्षुरिन्द्रिय के विषयों को काम कहते है। जैसे–श्रोतेन्द्रिय की अपेक्षा से संगीत व वाद्यों के माध्यम से राग-रागिणियों को श्रवणकर प्राणी उसी में लीन हो जाता है। चक्षुरिन्द्रिय की अपेक्षा से परस्पर विरुद्ध वेदों (नपुंसक छोड़–यह उभयवेदों) से आकर्षित

1. मोक्षमार्ग में बीस कदम, प्रवचनकार–श्री परमसागरसूरिश्वरजी म. सा., पृष्ठ 10
2. वही-पृष्ठ - 10
3. श्री उत्तराध्ययन से चुने दिव्य मोती, साध्वी विचक्षणास्री प्रज्ञा प्रथम संस्करण, सन्-2007, पृष्ठ-179
4. वही पृष्ठ - 27

हो अंगोपांग देखना, नग्न चित्र, सिनेमा, नाटकादि में लुब्धता व इन इन्द्रिय विषयों के अतिरिक्त वेश्यागमन, पर स्त्री गमन, वाग्दत्ता गमन, अनंगक्रीड़ा, हस्तकर्म आदि अनेकानेक प्रकार से विषय सेवन में रत व्यक्ति बेभान हो उठता है। भावतः हिंसक तो कहलाता ही है द्रव्यतः भी विवेक का भान भूल कुछ भी कर गुजरने की हद में पहुँच जाता है।

15. **निद्रा**— प्रमाद के पन्द्रह भेदों के अंतर्गत निद्रा का अंतिम स्थान आता है। आठ कर्मों की अपेक्षा दूसरे कर्म दर्शनावरण के दो प्रकार है, यथा— दर्शन चतुष्क और निद्रा पंचक। निद्रा पंचक शब्द ही पाँच प्रकार की निद्रा अर्थ में निहित है। यथा-निद्रा, निद्रा-निद्रा, प्रचला, प्रचला-प्रचला तथा स्त्यानर्द्धि (गृद्धिका)।

1. **निद्रा**—आहट या खटके की हल्की सी आवाज सुनकर जाग जाने को निद्रा कहते हैं। जागने अथवा सोने में सामान्य स्थिति रहती है।

2. **निद्रा-निद्रा**—किसी का स्पर्श अथवा आवाज दिया जाने पर जिस निद्रा से जाग जाय उसे निद्रा-निद्रा कहते है। इस कर्म से सोने अथवा जागने की स्थिति सामान्य नहीं रहती, कष्ट का अनुभव होता है।

3. **प्रचला**—इस कर्म से जीव को खड़े अथवा बैठे हुए नींद आती है।

4. **प्रचला-प्रचला**—इस कर्म से चलते-फिरते नींद आती है।

5. **स्त्यानर्द्धि**—इस निद्रा में वासुदेव के बल से आधा बल आता है। जागते हुए कल्पना में किये असाधारण बल के कार्य को भी वह नींद में पूरा कर वापस सो जाता है। जागने पर कुछ याद नही रहता। पूर्व में आयुष्य बंध ना किया हो तथा इस निद्रा में मृत्यु हो जाय तो निश्चित रूप से जीव नरक में जाता है। यह प्रमाद की अति है।

यद्यपि प्रमादी हिंसक कहलाता है, अतः वह बुराइयों को ग्रहण करता है तथापि अप्रमत्त हो अहिंसक बनने की क्षमता भी चेतन में ही है। पाँच आश्रव रूपी बुराइयों को रोकने के पाँच सूत्र मुनि सुखलाल[1] इस प्रकार कहते है—

1. **अनाग्रह**— सापेक्ष दृष्टि से सोचे (अपना विचार ना हो अथवा दूसरे के विचारों पर संदेह हो, दोनों गलत) गाँधीजी का सत्याग्रह, विनोबाजी ने सत्याग्रहिता पर सत्याग्रह से अधिक बल दिया। अपनी बात पर अड़िग रहने की बजाय सत्य को उसकी सापेक्षता में ही समझना है। अच्छे विचारों का ही प्रवेश।

---

1. युवादृष्टि, खिलौना माटी का, मार्च 2012, वर्ष-40, अंक-3, पृष्ठ-10

2. दृढ़ संकल्प– अपने मन के भी स्वामी जो नहीं बन सकते, दूसरों के कैसे स्वामी बन सकते है?

3. अप्रमाद– अर्थात् जागरुकता। **'सावधानी हटी, दुर्घटना घटी'**। प्रमाद के क्षणों में व्यक्ति महत्त्वपूर्ण दस्तक को भी नहीं सुन सकता। अप्रमत्त बनकर ही बुराई-अच्छाई में भेदकर जीवन सार्थक किया जा सकता है।

4. अनावेग– आवेग में काम, भोग, क्रोध, मान, माया, लोभ आदि का समावेश जो मनुष्य को बेहोश बना देता है। उतार-चढ़ाव में संतुलन ही अनावेश है।

5. संयम– तनावमुक्ति मन, वचन व काय् की चंचलता वा तनाव पर नियंत्रण रखें जो संयम से ही संभव है। स्व-विश्लेषण कर दोष त्याग वीर ने की प्रसूत प्रवृत्ति ही निवृत्ति से श्रेयस्कर है प्रमादी हिंसक कहलाता है। यह स्पष्ट करते हुए विस्तार पूर्वक हिंसक के प्रकार व प्रमाद का विश्लेषण 'हिंसक' को हर कोण से स्पष्टतः उजागर करने में सक्षम है। हिंसा के घटित होने में हिंसक, हिंस्य, हिंसा, तथा हिंसा का फल यह तथ्य जुड़े होते है, ऐसा पूर्व में भी कथन किया गया है। अतः हिंसक के स्पष्टीकरण के पश्चात् हिंस्य पर प्रकाशं ड़ालना कथन को पुख्ता साबित करने के लिए आवश्यक है। अतः हिंस्य पर एक दृष्टि क्षेप–

हिंस्य– हिंस्य कौन है? प्राण हिंस्य है तथा प्राण को बलप्राण भी कहते है। बलप्राण किसे कहते है? किसी कार्य में प्रवृत्ति करने के लिए प्रयुक्त जीवन शक्तियाँ अथवा बल आधार बलप्राण कहलाता है तथा इन बलप्राणों को जो धारण करे वह प्राणी। संसारी प्राणियों में बलप्राण दो प्रकार के होते है यथा– द्रव्य प्राण तथा भाव प्राण।

द्रव्य बलप्राण क्या है? द्रव्य बलप्राण पौद्गलिक है। पुद्गल के वीर्यगुण की पर्याय है। भाव बलप्राण क्या है? भाव बलप्राण जीव के वीर्यगुण की पर्याय है।[1]

द्रव्य बलप्राण के दस भेद है[2] (यह सब पुद्गल द्रव्य की पर्यायें है) जीवों की इन द्रव्य प्राणों के संयोग से जीवन रूप और इनके वियोग से मरण रूप अवस्था व्यवहार से कही जाती है।

(क्रमशः)

---

1. श्री टोडरमल ग्रंथमाला का 49वाँ पुष्प श्री पंडित गोपालदासजी बरैया की लगु जैन सिद्धान्त प्रवेशिका की रचना पर आधारित, 22वाँ संस्करण, 27 अगस्त 1998, पृष्ठ-25
2. अहिंसक जीवन शैली, प्रकाशक-कल्याणमल चंचलमल चोरडिया ट्रस्ट, जोधपुर, पृष्ठ-9

ग्वालियर सम्भाग की जैन कला में ऋषभनाथ

अजीत प्रताप सिंह

ग्वालियर सम्भाग मध्यप्रदेश के उत्तरी भाग के अन्तर्गत आता है, जिसमें ग्वालियर जिले के अतिरिक्त शिवपुरी, गुना, भिण्ड, मुरैना एवं दतिया जिले सम्मिलित हैं। ग्वालियर सम्भाग में जैन प्रतिमाओं का निर्माण गुप्तकाल के पश्चात् प्रारम्भ हुआ। जैन ग्रन्थों के अनुसार आठवीं शताब्दी ई. में यशोवर्मन (725-752 ई.) के पुत्र एवं उत्तराधिकारी आम नामक राजा के संरक्षण में ग्वालियर सम्भाग के विभिन्न क्षेत्रों में जैन धर्म एवं कला की उन्नति के लिए कार्य प्रारम्भ हुए।[1] ग्वालियर के तोमर वंशीय शासक डंगर सिंह (1425 ई.), कीर्ति सिंह (1459 ई.) तथा मान सिंह (1486 ई.) के शासन काल में ग्वालियर सम्भाग के विभिन्न क्षेत्रों में अनेक जैन मन्दिरों एवं प्रतिमाओं का निर्माण किया गया।[2] यहाँ निर्मित जैन प्रतिमाओं में ऋषभनाथ (आदिनाथ) की सुन्दर प्रतिमाओं की गणना की जा सकती है।

जैन परम्परा में ऋषभनाथ मानव समाज के आदि संस्थापक एवं वर्तमान अवसर्पिणी युग के प्रथम तीर्थंकर माने गये हैं। प्रथम तीर्थंकर होने के कारण ही इन्हें आदिनाथ भी कहा जाता है। ऋषभनाथ के पिता अयोध्या के राजा नाभि तथा माता मरुदेवी थीं। इनकी माता ने गर्भधारण की रात्रि 16 मांगलिक स्वप्न देखे,[3] ऋषभ की माता का स्वप्न में वृषभ का दर्शन किये जाने के कारण ही बालक का नामकरण 'ऋषभ' किया

---

1. मंजूमदार और पुसालकर, द एज ऑफ इम्पीरियल कन्नौज, बम्बई, 1955 पृष्ठ-290
2. द्विवेदी, हरिहर निवास, मध्यदेशीय भाषा, पृष्ठ 138-140
3. 16 शुभस्वप्न निम्नवत हैं– वृषभ, गज, सिंह,, लक्ष्मी, (या श्री) पुष्पहार, चन्द्र, सूर्य, ध्वजदण्ड, पूर्णकुम्भ, पद्मसरोवर, क्षीरसमुद्र, देव विमान, रत्नराशि, निर्धूमअग्नि, मत्स्य युगल एवं सिंहासन। महापुराण, 12·101-120, हरिवंश पुराण 8·58-74

गया। 'आवश्यक चूर्णि' में वर्णित है कि माता द्वारा देखे गये प्रथम स्वप्न (वृषभ) एवं बालक के वक्षस्थल पर वृषभ चिन्ह अंकित होने के कारण ही बालक का नाम ऋषभ रखा गया।[4] सम्भवतः यही कारण है कि कालान्तर में उनका लाँछन 'वृष' निर्धारित किया गया।

प्रारम्भिक मूर्तियाँ : ऋषभदेव का लाँछन 'वृषभ' और यक्ष-यक्षिणी गोमुख एवं चक्रेश्वरी (अप्रतिचक्रा) हैं।[5] ऋषभनाथ की प्राचीनतम् प्रतिमाएँ कुषाण काल की हैं। ये प्रतिमाएँ मथुरा और चौसा से प्राप्त हुई हैं। इनमें ऋषभ ध्यान मुद्रा या कायोत्सर्ग मुद्रा में खड़े हैं और तीन या पाँच केशवल्लरियों से शोभित हैं। मथुरा की तीन प्रतिमाओं में पीठिका लेखों में भी ऋषभनाथ का नाम अंकित है। चौसा से ऋषभनाथ की दो प्रतिमाएँ प्राप्त हुई हैं, इनमें वे कायोत्सर्ग मुद्रा में हैं। ये मूर्तियाँ पटना संग्रहालय (6538.6539) में सुरक्षित हैं।

गुप्तकालीन ऋषभनाथ की प्रतिमाएँ मथुरा चौसा एवं अकोटा से मिली हैं। मथुरा से प्राप्त छः प्रतिमाओं में से तीन में उन्हें कायोत्सर्ग मुद्रा में निर्मित किया गया है।[6] इन प्रतिमाओं में ऋषभनाथ को अलंकृत प्रभामण्डल, पार्श्ववर्ती चामरधारी एवं तीन या पाँच लटों से युक्त दर्शाया गया है। एक उदाहरण (पुरातत्व संग्रहालय मथुरा, 12.268) में ऋषभनाथ का नाम पीठिका पर उत्कीर्ण है। लगभग सातवीं शताब्दी ई. की एक प्रतिमा अकोटा से एवं चार प्रतिमाएँ चौसा से प्राप्त हुई हैं।[7] इनमें ऋषभनाथ को जटाओं एवं यक्ष सर्वानुभूति और यक्षिणी अम्बिका से युक्त दिखाया गया हैं।

पूर्व मध्यकाल में भी ऋषभनाथ की प्रतिमाओं के निर्माण में निरन्तरता बनी रही। आठवीं-नवीं शताब्दी ई. की ऋषभनाथ की प्रतिमाएँ लखनऊ (जे-78), मथुरा (18.150-54) देवगढ़ एवं ग्वालियर

---

4. आवश्यकचूर्णि, पृष्ठ 151
5. रुपमण्डन, अध्याय-6
6. पाँच प्रतिमाएँ मथुरा संग्रहालय और एक राज्य संग्रहालय (72) में संग्रहीत है।
7. शाह, यू.पी., अकोटा ब्रोन्जेज, मुम्बई, पृष्ठ 38, 41-43

से प्रप्त हुई हैं। इसी समय की एक ध्यानस्थ ऋषभनाथ प्रतिमा कोसम (उ. प्र.) से मिली है। लखनऊ राज्य संग्रहालय की 23 ऋषभनाथ प्रतिमाएँ आठवीं शताब्दी ई. से बारहवीं शताब्दी ई. के मध्य की हैं। खजुराहों में दसवीं श. ई. से बारहवीं श. ई. के मध्य की लगभग पचास प्रतिमाएँ पायी गई हैं। देवगढ़ में लगभग इसी समय की साठ से अधिक ऋषभनाथ प्रतिमाएँ दर्शनीय हैं।[8]

ग्वालियर सम्भाग की ऋषभनाथ प्रतिमाएँ : ग्वालियर सम्भाग के विभिन्न स्थलों से प्राप्त ऋषभनाथ की प्रतिमाओं का विवरण इस प्रकार है–

1. ग्वालियर दुर्ग में स्थित तेली मन्दिर के परिसर में नवीं श. ई. की एक प्रतिमा कायोत्सर्ग मुद्रा में स्थित है, जिसके परिकर में चौबीस तीर्थंकर आकृतियाँ विद्यमान हैं।[9] इस प्रतिमा को उसके सामान्य लक्षणों से पहचाना जा सकता है।

2. ग्वालियर दुर्ग के उरवाही द्वार के सामने ऋषभनाथ की एक स्वतंत्र विशाल प्रतिमा विराजमान है। यह प्रतिमा 57 फीट ऊँची खड्गासन मुद्रा में है। इसके पैरों की लम्बाई 9 फीट है। श्वेताम्बर आचार्य शील विजय और आचार्य विजय ने अपनी 'तीर्थमाला' में इस प्रतिमा को 'बावनगजा' बताया है। मुगलशासक बाबर ने अपनी आत्मकथा 'बाबरनामा' में इसे 40 फीट लिखा है, किन्तु ये दोनों ही धारणाएँ गलत हैं। वास्तव में यह प्रतिमा 57 फीट की है।[10] इस प्रतिमा के पादपीठ पर एक लेख अंकित है, जिसके अनुसार इसकी प्रतिष्ठा सम्वत् 1510 में साहू कमल सिंह तथा प्रतिष्ठाचार्य रइघू ने कराई। इसके अतिरिक्त एक अन्य 7 फीट ऊँची प्रतिमा ग्वालियर दुर्ग में स्थित गूजरी महल संग्रहालय में संग्रहीत है।

3. ग्वालियर दुर्ग में स्थित 'एक पत्थर की बावड़ी' में ऋषभनाथ की

---

8. तिवारी, मारुतिनन्दन प्रसाद, जैन प्रतिमा विज्ञान, वाराणसी, 1981, पृष्ठ 88-89
9. अमेरिकन इन्स्टीट्यूट ऑफ इण्डियन स्टडीज, वाराणसी, चित्र संग्रह, 8369
10. जैन, रामजीत ग्वालियर गौरव गोपाचल, ग्वालियर, 2009, पृष्ठ-63

लगभग 14 प्रतिमाएँ विराजमान हैं, जो गुफा सं. 2, 3, 9, 11, 12, 15, 17, 18, 22 और 26 में स्थित हैं, जिनमें कभी कन्धों तक लटकती जटाएँ और कभी पादपीठ पर 'वृषभ' लाँछन को अंकित किया गया है। इन प्रतिमाओं में अधिकांश मध्यकाल में निर्मित की गयीं।

4. ऋषभनाथ की एक प्रतिमा ग्वालियर जिले के 'पनिहार' नामक स्थान पर स्थित चौबीसी मन्दिर में स्थापित है। इसकी ऊँचाई लगभग 2.75 फीट है, जिसके पादपीठ पर 'वृषभ' लांछन देखा जा सकता है। यह प्रतिमा सफेद पत्थर से निर्मित पद्मासन मुद्रा में है। इसके प्रतिमा लेख के आधार इसकी प्रतिष्ठा 1429 ई. में की गई। इस समय दिल्ली में फिरोज शाह तुगलक शासनकर रहा था।

5. गुना जिले में थूवौन क्षेत्र में कुल 25 जैन मंदिर है। मन्दिर सं. 15 में ऋषभनाथ की 25 फीट ऊँची खड्गासन प्रतिमा आसीन है। गले में त्रिवली, वक्ष पर 'श्रीवत्स' का लाँछन तथा प्रतिमा के दोनों ओर चामरधारी यक्ष स्थित हैं। चरणों के निकट श्रावक युगल तथा दोनों ओर दो खड्गासन और दो पद्मासन तीर्थंकर प्रतिमाएँ भी हैं। इस प्रतिमा की प्रतिष्ठा लेख के अनुसार बैशाख शुक्ल 5 सम्वत् 1672 में की गई। यहाँ के मंदिर संख्या 25 में भी ऋषभनाथ की एक 16 फीट ऊँची खड्गासन प्रतिमा स्थित है।

6. गुना जिले के चन्देरी क्षेत्र के मुख्य चौबीसी मन्दिर के प्रथम गर्भगृह में ऋषभनाथ की स्वर्णवर्ण प्रतिमा पद्मासन मुद्रा में स्थापित है। इसकी ऊँचाई 3.5 फीट है। इसके प्रतिमा लेख से ज्ञात होता है कि इसकी स्थापना सोनागिरि (दतिया, म. प्र.) में की गई थी। इसका प्रतिष्ठायक चन्द्रावली नगर का बताया गया है। गुना जिले से ग्यारहवीं शताब्दी की एक ऋषभनाथ प्रतिमा प्राप्त हुई है, जिसमें वे जटा-जूट के साथ प्रदर्शन हैं।[11]

7. ग्वालियर जिले के दूबकुण्ड नामक स्थान से ग्यारहवीं शताब्दी की एक

---

11. गर्ग, आर.एस., मालवा के जैन प्राच्यावशेष, जै. सि. भा. खण्ड 24, अं. 1, पृष्ठ-58

प्रतिमा (J.820) प्राप्त हुई है, जिसमें वे त्रिछत्र के ऊपर आमलक एवं कलश तथा परिकर में 22 लघु तीर्थंकर प्रतिमाएँ उत्कीर्ण हैं। इनमें तीन और पाँच सर्पफणों से आच्छादित दो तीर्थंकरों की पहचान पार्श्वनाथ और सुपार्श्वनाथ से की जा सकती है।

8. ग्वालियर जिले के अमरोल नामक स्थान पर मध्यकाल की एक ऋषभनाथ की प्रतिमा पायी गई है, जिसके चारों ओर यक्षों की वामन आकृतियाँ पद्मासन मुद्रा में अंकित हैं।

9. ग्वालियर दुर्ग में स्थित गूजरी महल संग्रहालय में ऋषभनाथ की प्रतिमा का धड़ (सं. 55) संग्रहीत है, जो लश्कर से प्राप्त हुआ था। इसकी ऊँचाई 95 से. मी. है। यह प्रतिमा गुप्तकालीन मानी जाती है।[12]

10. ग्वालियर दुर्ग के दक्षिण-पश्चिमी समूह में 13 फीट ऊँची ऋषभनाथ की एक प्रतिमा विराजमान है, जिसके कन्धों तक लटकती हुई केशराशि दर्शायी गई है।[13] उत्तर-पूर्वी समूह के मन्दिर सं. 3 के गर्भगृह में 6 x 6.25 मी. की लम्बाई एवं चौड़ाई की प्रतिमा पद्मासन में आसीन है। सिर के ऊपर तीन छत्र, वक्ष पर 'श्रीवत्स' का लाँछन अंकित है। यह प्रतिमा मध्यकालीन कही जा सकती है।

11. ग्वालियर दुर्ग में स्थित गूजरी महल संग्रहालय में 1.16 मी. ऊँची ऋषभनाथ प्रतिमा (सं. 128) स्थित है। इसका पादपीठ खण्डित है। शेष परिकर भाग में आठ लघु तीर्थंकर आकृतियाँ हैं। मध्यकालीन विशेषताओं से युक्त यह प्रतिमा चतुर्विंशति-पट्ट था, जिसके मूलनायक ऋषभनाथ हैं।[14]

12. गूजरी महल संग्रहालय (ग्वालियर दुर्ग) की एक ऋषभनाथ प्रतिमा (सं. 118) ध्यान मुद्रा में संग्रहीत है। इसके अर्धोन्मीलित नेत्र, कंघी किए हुए केश, मनोहर मुखमण्डल तथा लम्बे कान आदि दर्शनीय हैं। इसके मस्तक पर ऊर्णा और सिर पर उष्णीय सुशोभित है। सिर

---

11. गर्ग, आर, एस., मालवा के जैन प्राच्यावशेष, जै. सि. भा. खण्ड 24, अं. 1, पृष्ठ 58
12. घोष, अमलानन्द, जैन कला एवं स्थापत्य, तृतीय भाग, नई दिल्ली, 1975, पृष्ठ-600
13. जैन, रामजीत, ग्वालियर गौरव गोपाचल, ग्वालियर, द्वितीय संस्करण, 2003, पृष्ठ 47
14. घोष, अमलानन्द, जैन कला एवं स्थापत्य, तृतीय भाग, 1975, पृष्ठ-601

के पीछे अलंकृत प्रभामण्डल है। प्रतिमा के बायीं ओर घटपल्लव, किंकिणिका, अर्धपद्म तथा ताड़पत्र आदि से अलंकृत एक अर्धस्तम्भ है। ऐसा ही एक स्तम्भ प्रतिमा के दायीं ओर भी रहा होगा। यह प्रतिमा सम्भवतः दो अर्धस्तम्भों से युक्त किसी रधिका में रही होगी। यह प्रतिमा मध्यकालीन विशेषताओं से युक्त है।

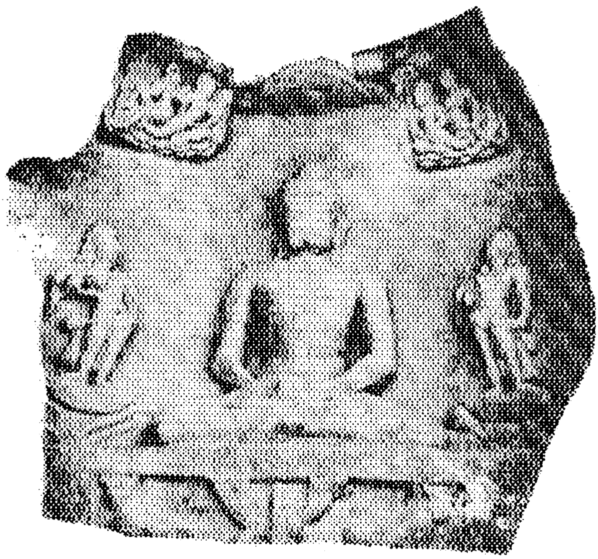

13. वर्तमान सौहजना घाटी (ग्वालियर जिला) से एक ऋषभनाथ की पद्मासन प्रतिमा प्राप्त हुई है, जिसके सिर पर उष्णीष, कंधों तक केशराशि, मालाधारी गन्धर्व प्रदर्शित हैं। पादपीठ पर बायीं ओर गोद में बालक लिए यक्षी तथा दायीं ओर पद्मासन यक्षी का अंकन है। पादपीठ पर गोमुख यक्ष तथा चक्रेश्वरी का अंकन प्रभावशाली है।

14. ऋषभनाथ की एक प्रतिमा शिवपुरी के जिले संग्रहालय में देखी जा सकती है, जो नरवर से प्राप्त हुई थी। इसका सिर खण्डित है, वक्ष पर 'श्रीवत्स' का अंकन तथा पादपीठ पर 'वृषभ' का उत्कीर्णन है। इस प्रतिमा लेख में संवत् 1341 का उल्लेख है।[16]

---

15. सिंह, अमर, ग्वालियर दुर्ग मन्दिर एवं मूर्तियाँ, लखनऊ, 1696, पृष्ठ 136
16. जैन, कस्तूरचन्द्र, भारतीय दिगम्बर जैन अभिलेख और तीर्थ परिचय, मध्यप्रदेशः 13वीं श. ई. तक, दिल्ली, 2001, पृष्ठ 294

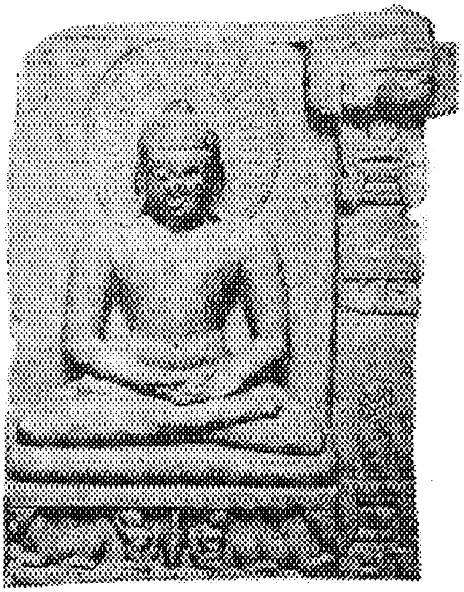

उपर्युक्त स्थलों से प्राप्त ऋषभनाथ की प्रतिमाओं में अधिकांशतः कन्धों तक लटकती हुई केशराशि (लटों) तथा पादपीठ पर 'वृषभ' लाँछन का अंकन देखने को मिलता है। ऋषभनाथ के यक्ष-यक्षी गोमुख और चक्रेश्वरी बहुत कम देखने को मिलते हैं। इन स्थलों पर ऋषभनाथ की प्रतिमाएँ छठी श. ई. से लेकर अठारहवीं श. ई. तक मिर्मित की जाती रही और ये अन्य तीर्थंकरों की अपेक्षा अधिक संख्या में मिलती हैं।

(समाप्त)

सोने के कंगन

श्री केवल मुनि

वनवासी कुमार शूर भी दैवयोग से वहाँ आ निकला। दोनों एक दूसरे को देखते ही पूर्वभव के वैर के कारण क्रोधित हो गये और हाथी ने कुमार का वध कर दिया। वहाँ से मरकर कुमार एक भील-पुत्र हुआ। हाथी ने उस भील-पुत्र को भी मार दिया और स्वयं अन्य किराती द्वारा मारा गया। अगले जन्म में किसी महा अटवी में एक हाथी तथा दूसरा सुअर (जंगली शूकर) हुआ। वहाँ भी वे क्रोधांध होकर लड़ने लगे। वहाँ किसी व्याध (शिकारी) ने उन दोनों का प्राणान्त कर दिया। इसके पश्चात् विंध्याचल अटवी में दोनों हाथी के बच्चे हुए। पूर्वभवों की शत्रुता के कारण दोनों ही यूथ (समूह) से अलग हो गये और पुनः लड़ने लगे। उसी समय भीलों ने उन्हें रस्सियों से जकड़ कर बाँध लिया और परम्परा के अनुसार राजा अवसेन को भेंट कर दिया। वहाँ वे युद्ध में पुनः प्रवृत्त हो गये। बड़ी कठिनाई से राजा और सैनिकों ने उन्हें अलग किया।

एक दिन केवली भगवन्त का आगमन हुआ तब राजा जयसेन ने उनसे उन हाथियों के परस्पर वैर का कारण पूछा। भगवान ने उनके सभी पूर्वभवों का वर्णन किया और बताया कि अगले जन्म में ये प्रथम नरक को जायेंगे तथा उसके बाद भी अनेक कुयोनियों में भटकते रहेंगे।

भगवान की देशना से राजा जयसेन को बोध हुआ और उसने संयम धारण कर लिया।

यह दृष्टांत सुनाकर मुनि जी स्त्रियों को प्रतिबोध देने लगे–हे श्रेष्ठिबंधुओं! स्थूलप्राणातिपातविरमण व्रत स्वीकार करने से जीव अनेक कुयोनियों में भटकने से बच जाता है और आत्मोन्नति के मार्ग पर आगे

बढ़ने लगता है जिससे उसे उत्तरोत्तर सुख-शांति मिलती है और अन्त में वह आत्मिक सुख की चरमावस्था प्राप्तकर लेता है।

बत्तीसों स्त्रिओं को प्रतिबोध प्राप्त हुआ। उन्होंने स्थूल प्राणातिपात विरमण व्रत स्वीकार कर लिया। मैंने विचार किया, चलो, यह अच्छा ही हुआ। अब यह कोई हानि नहीं पहुँचायेगी। मैं अब इस साधु को पाँच नहीं, चार ही लकड़ियाँ मारूँगा।

मुनिश्री ने स्त्रियों को संबोधित करते हुए कहा–श्राविकाओं! असत्य बोलना भी तो हिंसा ही है। कुटिल, भयंकर, छिद्रान्वेषी व्यक्ति अपने वचन रूपी डंको से बिच्छू के समान दूसरों को तो दुःख देता ही है, स्वयं भी दुःखी होता है। सत्य बोलने वाला धन्य सभी स्थानों पर सम्मानित हुआ और असत्यवादी धरण को पग-पग पर तिरस्कार सहना पड़ा।

स्त्रियों ने पूछा–गुरुदेव! ये धन्य और धरण कौन थे? इनमें से एक का सम्मान और दूसरे का अपमान कैसे हुआ?

गुरुदेव स्त्रियों की जिज्ञासा शांत करते हुए कहने लगे–

इस विजय के सुनन्दन नगर में सुदत्त नाम का श्रेष्ठी है। उसके दो पुत्र हुए। पहले का नाम था धन्य और दूसरे का धरण। धन्य सज्जन, सौम्य, प्रियवादी एवं सत्यवादी था जबकि धरण दुर्जन, दुष्ट, कटु और असत्यवादी। अपने सद्‌गुणों के कारण धन्य सर्वत्र आदर पाता और धरण का लोग तिरस्कार करते।

एक दिन धरण ने सोचा कि जब तक धन्य जीवित है मुझे तिरस्कार ही मिलेगा? वह उसे अपने साथ उद्यान में ले गया और कहने लगा–भाई धन्य। हम लोगों को स्वयं ही धन उपार्जन करना चाहिए क्योंकि हम वणिक्-पुत्र हैं और व्यापार से धन कमाना ही हमारा कर्त्तव्य है। चलो, परदेश चलते हैं।

धन्य ने उत्तर दिया–

–बांधव! कहते तो तुम यथार्थ हो किन्तु बिना धन के धन का उपार्जन कैसे होगा?

–अनेक तरीके हैं धन कमाने के। किसी की गठरी छीन लेंगे, कहीं चोरी कर लेंगे, किसी का धन लूट लेंगे।

–कैसी बात कर रहे हो? अधर्म से भी कहीं धन का उपार्जन होता है और कदाचित हो भी जाय तो भी यह सर्वथा अनुचित है। मैं ऐसा कभी नहीं करूँगा।

धरण ने सोचा कि तर्क करना व्यर्थ है। वह कपटपूर्वक बोला-

भाई! मैं तो तुम्हारी परीक्षा ले रहा था। मैं भी आज से कटु वचनों का त्याग करता हूँ। परदेश जाकर हम लोग किसी की सेवा करेंगे और धन उपार्जन कर लेंगे।

सरलहृदयी धन्य उसकी बातों में आ गया। दोनों भाई पिता को बताये बिना परदेश चल दिये। मार्ग में चलते-चलते धरण मन में विचार करने लगा कि ऐसा उपाय करना चाहिए कि धन्य घर को वापिस ही न लौटे। वह बोला–

–बन्धु! प्राणी धर्म से सुख पाता है या अधर्म से?

–इसमें पूछने की क्या बात है? धर्म से जय मिलती है और अधर्म से पराजय!

–यह तुम्हारा भ्रम है। आजकल तो विजय अधर्म की होती है और धर्म को कोई पूछता भी नहीं।

धन्य ने धरण का यह तर्क नहीं माना। परिणाम-स्वरूप दोनों में विवाद होने लगा। वाक्युद्ध से बचने के लिए धरण ने कहा–

भैया! हम दोनों के परस्पर विवाद से तो निर्णय होगा नहीं। सामने गाँव दिखाई दे रहा है। वहाँ जाकर निर्णय कराए लेते हैं। जो हारेगा उसकी एक आँख फोड़ दी जायेगी। बोलो, शर्त स्वीकार है।

धन्य को विश्वास था कि विजय धर्म की ही होगी। उसने शर्त स्वीकार कर ली।

(क्रमशः)

JAIN BHAWAN PUBLICATIONS

P-25, Kalakar Street, Kolkata - 700 007, Phone: 2268 2655

English :

1. Bhagavati-sutra-Text edited with English translation by K. C. Lalwani in 4 volumes:
   Vol - 1 (satakas 1- 2) Price : Rs. 150.00
   Vol - 2 (satakas 3- 6) 150.00
   Vol - 3 (satakas 7- 8) 150.00
   Vol - 4 (satakas 9- 11) ISBN : 978-81-922334-0-6 150.00
2. James Burges - The Temples of Satrunjaya. Jain Bhawan. Kolkata ; 1977. pp. x+82 with 45 plates Price : Rs. 100.00
   (It is the glorification of the sacred mountain Satrunjaya.)
3. P. C. Samsukha - Essence of Jainism Price : Rs. 15.00
   ISBN : 978-81-922334-4-4
4. Ganesh Lalwani - Thus Sayeth Our Lord, Price : Rs. 50.00
   ISBN : 978-81-922334-7-5
5. Verses from Cidananda
   Translated by Ganesh Lalwani Price : Rs. 15.00
6. Ganesh Lalwani - Jainthology Price : Rs. 100.00
   ISBN : 978-81-922334-2-0
7. Lalwani and S. R. Banerjee-
   Weber's Sacred Literature of the Jains Price : Rs. 100.00
   ISBN : 978-81-922334-3-7
8. Prof. S. R. Banerjee
   Jainism in Different States of India Price : Rs. 100.00
   ISBN : 978-81-922334-5-1
9. Prof. S. R. Banerjee
   Introducing Jainism ISBN : 978-81-922334-6-8 Price : Rs. 30.00
10. Smt. Lata Bothra- The Harmony Within Price : Rs. 100.00
11. Smt. Lata Bothra- From Vardhamana- to Mahavira Price : Rs. 100.00
12. Smt. Lata Bothra- An Image of- Antiquity Price : Rs. 100.00

Hindi :

1. Ganesh Lalwani - Atimukta (2nd edn) ISBN : 978-81-922334-1-3
   Translated by Shrimati Rajkumari Begani Price : Rs. 40.00
2. Ganesh Lalwani - Sraman Samskriti Ki Kavita, Translated by Shrimati Rajkumari Begani Price : Rs. 20.00
3. Ganesh Lalwani - Nilanjana, Translated by Shrimati Rajkumari Begani Price : Rs. 30.00
4. Ganesh Lalwani - Chandan-Murti
   Translated by Shrimati Rajkumari Begani Price : Rs. 50.00
5. Ganesh Lalwani-Vardhaman Mahavira Price : Rs. 60.00

6.	Ganesh Lalwani-Barsat ki Ek Raat,	Price : Rs.	45.00
7.	Ganesh Lalwani -- Panchdasi.	Price : Rs.	100.00
8.	Rajkumari Begani-Yado ke Aine me.	Price : Rs.	30.00
9.	Dr. Lata Bothra - Bhagavan Mahavira Aur Prajatantra	Price : Rs.	15.00
10.	Dr. Lata Bothra - Sanskriti Ka Adi Shrote, Jain Dharm	Price : Rs.	24.00
11.	Prof. S.R. Banerjee - Prakrit Vyakarana Praveshika	Price : Rs.	20.00
12.	Dr. Lata Bothra - Adinath Risabdev Aur Asthapad ISBN : 978-81-922334-8-2	Price : Rs.	250.00
13.	Dr. Lata Bothra - Astapad Yatra	Price : Rs.	50.00
14.	Dr. Lata Bothra - Aatm Darsan	Price : Rs.	50.00
15.	Dr. Lata Bothra - Varanbhumi Bengal ISBN : 978-81-922334-9-9	Price : Rs.	50.00
16.	Dr. Lata Bothra - Tatva Bodh	Price : Rs.	

Bengali :

1.	Ganesh Lalwani-Atimukta,	Price : Rs.	40.00
2.	Ganesh Lalwani-Sraman Sanskriti ki Kavita	Price : Rs.	20.00
3.	Puran Chand Shymsukha-Bhagavan Mahavir O Jaina Dharma.	Price : Rs.	15.00
4.	Prof. Satya Ranjan Banerjee Prasnottare Jaina-Dharma	Price : Rs.	20.00
5.	Dr. Jagatram Bhattacharya Das Baikalik Sutra	Price : Rs.	25.00
6.	Prof. Satya Ranjan Banerjee Mahavir Kathamrita	Price : Rs.	20.00
7.	Sri Yudhishthir Majhi Sarak Sanskriti O Puruliar Purakirti	Price : Rs.	20.00

Some Other Publications :

1.	Dr. Lata Bothra - Vardhamana Kaise Bane Mahavir	Price : Rs.	15.00
2.	Dr. Lata Bothra - Kesar Kyari Me Mahakta Jain Darshan	Price : Rs.	10.00
3.	Dr. Lata Bothra - Bharat Me Jain Dharma	Price : Rs.	100.00
4.	Acharya Nanesh - Samata Darshan Aur Vyavhar (Bengali)	Price : Rs.	
5.	Shri Suyesh Muniji - Jain Dharma Aur Shasnavali (Bengali)	Price : Rs.	50.00
6.	K.C.Lalwani - Sraman Bhagwan Mahavira	Price : Rs.	25.00

इसके अलावा जैन धर्म से सम्बन्धित अन्य तीन पत्रिकाएँ :

अंग्रेजी त्रैमासिक पत्रिका	वार्षिक	500.00
ISSN 0021 - 4043	(आजीवन)	5000.00
हिन्दी मासिक पत्रिका	वार्षिक	500.00
ISSN 2277 - 7865	(आजीवन)	5000.00
बंगला मासिक पत्रिका	वार्षिक	200.00
ISSN : 0975 - 8550	(आजीवन)	2000.00

With Best Compliments from :

SWETA CATERERS

Specialist in

OUTDOOR CATERING
COOKING & SERVICE

Office :
184, JAMUNALAL BAJAJ STREET
3RD FLOOR, KOLKATA - 700 007
PHONE : 22734216

Residence :
6/4, RAJ KRISHNA KUMAR STREET
(JAHAJBARI) BELURMATH, HOWRAH
PHONE : 2654 4016 / 7959

J. C. Patwa : 9830143688
S. K. Patwa : 9331926418

Vol XXXIX No.02
25th May 2015

TITTHAYARA

Postal Reg. No. KOL.RMS / 70/2013-15
R.N.I. 30181/77

Creators of Prestigious Interiors
Established 1970

Creativity is a Modern Religion

Nahar

Architects, Interiors, Consultants

5B, Indian Mirror Street, Kolkata-700 013
Phone : 2227-5240/45, Fax : 22276356
Email Id : info@nahardecor.com